साहब बीबी गुलाम

पूर्वाभास

इधर बहूबाजार स्ट्रीट और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू। बीच की साँप जैसी आँकी बाँकी गली आज तक इन दो राजपथों को मिलाने का काम करती रही। अब वैसा मुमकिन न रहा शायद। लगता है, रातों रात यह वनमाली सरकार लेन गायब हो गई। इतनी पुरानी गली। इसी के पश्चिम गोविन्दपुर और सूतानूटी के समय से वनमाली सरकार के पुरखे राज कर गए थे। कहावत-सी चल पड़ी थी, उमीचाँद की दाढ़ी और वनमाली सरकार की 'बाड़ी'। रोब दाब और बहार, शायद दोनों ही की एक-सी थी। उस जमाने में सद्‌गोप वनमाली सरकार को ईस्ट इंडिया कम्पनी से पटने की दीवानी मिली थी और कलकत्ते में मिला था कम्पनी के मातहत व्यापार करने का अधिकार। बहुत-बहुत पहले की हैं ये बातें। तब की जो कुम्हारटोली थी, उसमें उन्होंने लाट साहब के मुकाबले का एक मकान बनवाया। उनकी देखा देखी निमतल्ले में एक मकान बनवाया, उस समय के दूसरे एक बड़े आदमी मथुर सेन ने। मगर कहाँ वनमाली सरकार का मकान और कहाँ वह! कोई मुकाबला नहीं। उसके बाद कहाँ तो गया कुम्हारटोली का वह मकान, कहाँ गए खुद वनमाली सरकार और कहाँ गए मथुरसेन! सच ही, हैरान रह जाना पड़ता है सोचकर। वे आर्मेनियन सौदागर कहाँ चले गए, जो सूत और नूटी का व्यापार करते थे! और कहाँ गये जाब चानक के उत्तराधिकारी अंग्रेज, जिन्होंने पुर्तगीजों के डर से कालीकट से भागकर सूतानूटी में पनाह ली थी, और बाद में जिन्होंने

कालीकट की नकल पर सूतानूटी का नाम रखा था कलकटा। आज तो सिर्फ कम्पनी के सिरिश्त के कागजात पुराने कागज पत्तर में मुश्किल से ढूंढकर निकालना पड़ता है सूतानूटी का नाम। फिर भी वनमाली सरकार इतने दिनों तक उस गली में सांस रोके जिन्दा जो रह सके सो महज कलकत्ता कारपोरेशन की मेहरबानी से। अब वह भी गया। गोविन्द राम उमीचान हुजरीमल नवूघर जगत् सेठ और मथुर सेन के साथ अब इतिहास के पन्नों में एकबारगी खो गए वनमाली सरकार भी। आधा तो सेण्ट्रल एवेन्यू बनते वक्त पहले ही जा चुका था रहा सहा आधा भी खत्म!

जिम्मेदारी इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट को सौंपी गई। गली में घुसते ही पछाही भड़भूजे का कोठा—मिट्टी की दीवार टिन की छौनी। होली के महीना भर पहले से ही भांजों की झनकार के साथ रामा हो रामा की गूंज। उसके बाद नाक की सीध में पूरब को बढ़िए। जरा दूर जाकर बाएँ, फिर बाएं को मुड़िए। सदगोप वनमाली सरकार की अकेली जमी पचौती थी वैसी ही उनके नाम की यह गली भी बेतरह ऐंठती हुई जाकर बहू-बाजार से मिली है। गली में दाखिल होते ही लगता, सामने की दीवार तक ही गई है यह। लेकिन हिम्मत बटोरकर बढ़ चलिए तो बहुत मजे हैं। कम ऊंचे मकानों के जो कमर सड़क की तरफ पड़ते हैं उनमें सजी बनी दूकानें। मोड़ों पर ज्यादातर सोने चांदी की दूकानें। बगल के एक मंजिला मकान के चौतरे पर इण्डिया टेलरिंग हाल। थोड़ी ही दूर चलकर बाएं बाजू राष्ट्रीय झण्डेवाला साइनबोर्ड—प्रभास बाबू का पवित्र खादी भण्डार। उसके भी आगे गुरुपदो के का स्वदेशी बाजार। जब वहाँ खरीदारों की बेतरह भीड़ हो जाती तो लोग बाग पास के सबुज संघ' के दरवाजे तक पहुंच जाते। कभी कभी सबुज संघ रोशनी और सजावट से जीवन्त हो उठता। कोई मौका भर मिल जाना चाहिए। फिर मुहल्ले वालों को नींद कहाँ नसीब! सुबह से शाम तक सबुज संघ की जय-जयकार के सिवा दुनिया में और घटना ही नहीं घटती कोई। लोग दफ्तर नहीं जाते, हाट-बाजार नहीं जाते सोते नहीं खाते नहीं, बस सबुज संघ और सबुज संघ। लेकिन उसके बाद ही पड़ता है ज्योतिपाण्डव श्रीमन्

अनन्त भट्टाचार्य का 'श्रीमहाकाली आश्रम', जहाँ इस घोर कलिकाल के मिलावट के जमाने में भी एक असली नवग्रह कवच सिर्फ तरह रुपये साढ़े पन्द्रह आने में मिलता है—डाक महसूल अलग। सत्य, त्रेता, द्वापर—वर्तमान, भूत, भविष्यत्—इस त्रिकालदर्शी राजज्योतिषी का बनाया हुआ वशीकरण बगलामुखी और धनदा कवच इंगलैंड अमरीका, अफ्रीका, चीन जापान, मलाया सिंगापुर जैसे सुदूर देशों तक जाता है। श्री श्री-महाकाली आश्रम की अन्यान्य विशेषताएं लाल नीली और पीली स्याही से विस्तारपूर्वक साइनबोर्ड पर लिखी हुई हैं। इसके बाद उस टिमाऊ मकान के सामने छज्जे के नीचे है बाछा की पकौड़ी की दूकान। अगल बगल के चार पाँच मुहल्लों में उसकी पकौड़ी की शोहरत है। तीन पुश्त से दूकान। बाछा अब नहीं रहा। उसका बेटा अधर। अधर का बेटा अक्रूर अब दूकान पर बैठता है। अक्रूर कारीगर खासा है। मिट्टी के एक बर्तन में बेसन रखकर बाएँ हाथ से उसमें थोड़ा सा सोडा मिलाकर ऐसे ढंग से मिलाता है कि गरम तेल के कड़ाह में डालते ही पकौड़ियाँ फाल की फूल उठती हैं। हथकट्टा कलुआ सुबह से ही आ बैठता। उसकी दूकान भी खुली न होती। जाड़े के दिनों में सुबह ही लोगों की भीड़ लग जाती अक्रूर पकौड़ियाँ छान छानकर टोकरी में रखता जाता। बाज़ बाज़ वक्त टोकरी में रखने की भी नौबत न आती। जीभ में फफोला पड़ने की नौबत! बारह बजे तक यही हाल। ऐसी ही और भी कितनी दूकानें बाईं तरफ। और इस तरह वह टेढ़ी मेढ़ी गली बहूबाज़ार स्ट्रीट से जा जा मिली है। दूकान दूकान, जितना जो कुछ भी है सब बाईं तरफ, लेकिन दाईं तरफ आर से छोर तक बस एक ही मकान, कबूतर के खोखों में छोटे मकर कमरे। किरायेदारों की ठसाठस से कालनेमि के लंका पटवारवाला हाल! तिल धरने की जगह नहीं। लोग कहा करते थे बड़ा महल। उस जमाने में इधर उतना बड़ा मकान दूसरा था भी नहीं! बालू के पलस्तर पर चूने की पोताई से जब तक चलाया जा सका चला। उसके बाद हाल से बाहर के चार पाँच कमरों में कायम हुआ था नेशनल स्कूल। एक कमरे में बहुत पहले से ही करघे बिछाये गए थे। तमाम दिन घट घट घड़ियाल की टन् टन् आवाज़ होती रहती। टिफिन के समय लेमनचूस

और पापड़ी के फेरीवाले घंटी टुनटुनाकर लड़कों का ध्यान खींचा करते। कभी किसी दिन किसी किरायेदार की बैठक में गाने-बजाने का समाँ। तानपूरे के अटूट सुर के साथ तबले पर कहरवा का रेला। 'पिया आवत नहीं' के साथ मीठे हाथ के तबले की तिहाई से मुहल्ला मात! कभी कभी 'पिया का मल्हार' के साथ तबले के मीठे ठक से खिंचकर रास्ते पर रसिक लोग रुक जाया करते उसके नाकते खिड़की में से। कभी जो मालिक थे भाग्य के फेर में वही आज हो गए थे किरायेदार। फिर भी बड़े महल के अन्दर कदम रखने की किसी की हिम्मत नहीं होती। फ्राक पहने कोई लड़की सपटकर कभी बाहर आ जाती और अंदर की दूकान से पकौड़े का दोना लेकर सटपट उसी दरवे में धस जाती। कभी किसी राहगीर पर साग भाजी के छिलके आ गिरते कोठे पर से, गोया फूल बरसते हों। वह बेचारा बेवकूफ की तरह ऊपर को निगाह उठाता, मगर कहाँ कोई! एक तरफ की रसोई से मछली और प्याज की बू व्यंग्य सा आती, तो दूसरी से आती विजय की घोषणा-सी मांस और गरम मसाले की गंध। एक दरवाजे पर आ लगी एक टैक्सी, औरतें सिमटा जाएंगी। ठीक इसी वक्त दूसरे दरवाजे पर आ लगी एक टुटही बग्घी, औरतें प्रसूति-सदन जाएंगी। जन्म मरण संगम का यह लीला विलास साठ सत्तर बरसों से पहले जाने कब से आभिजात्य के तेज प्रवाह में इस मुहल्ले में शुरू हुआ था और इन कई सालों के अरसे में वह निहायत मंथर विस्तीर्ण कगारे में बहने लगा।

हाँ चाहे मन्थर विस्तीर्ण—उस जमाने की जोड़ी चार घोड़े की गाड़ी, लैण्डो लण्डाऊ फिटन और ब्रूहम न हो न सही बला से न रही पर्देदार पालकी तंजाम की साड़ीवाली नौकरानी, या सुनहले रुपहले कमरबन्द वाले चोबदार दाढ़ियां हुक्कापरदार और खानसामे चालीस डाँडों वाली मयूरपंखी नाव की न हो हुई नसीब सवारी, नहीं मछली प्याज पोई का साग साथ के ऊपर एक छत की छाँह और सूतिका में पीड़ित बहू तो थी। अब तो वह भी नदारद। अब खड़ा हो तो कहाँ?

समय पर म्यूनिसिपल ट्रस्ट का नोटिस जा धमका।

बाबा की पकौड़ी की दूकान में जोरदार चर्चा चल पड़ी। चर्चा

चल पड़ी इण्डिया टर्फिंग हाल में। गुरुदास के 'स्वदेशी बाजार' के सामने, प्रभास बाबू के 'पवित्र खादी भण्डार' के बाहर भीतर। त्रिकाल दर्शी श्रीमान् अनन्तहरि भट्टाचार्य के श्री श्रीमहाकाली आश्रम में भी आलोचना होने लगी। ज्योतिषार्णव बोले—अगले माह कर्कट राशि में राहु का प्रवेश है, मामला बड़ा टेढ़ा है देश पर राज रोष। महल में भी तरह-तरह की बातें होने लगीं। इसमें तो भूकम्प बेतर था, बेतर था इससे सन् १७३८ का आँधी पानी जिसमें गंगा का पानी चालीस फुट ऊपर गया था। बड़ा भी था क्या एक ही बार! बड़े महल में जो बड़े-बूढ़े हैं, वे उन दिनों की बात जानते हैं। उस समय तुम लोगों की पैदा-इश ही नहीं हुई थी भाई! और मेरा भी तब जन्म हुआ था क्या, या मेरे दादा ही पैदा हुए थे! यह देश आज का है? कितनी सदा पहले की बात है जानें! तब गंगा पद्मा से थोड़ी ही मिली थी। वह नदिया और त्रिवेणी होकर सागर में जाकर मिलती थी। चतला के पास से एक पतला-सा पनाला बहते देखते हो न आदिगंगा वही थी लोग उसी को बूढ़ी गंगा कहते थे। बाद में जब बागी गंगा से आ मिली तो धारा टूट गई। भगीरथ की उसी गंगा को तुम लोग हुगली कहते हो, हम लोग कहते हैं भागीरथी। तब किसे पता था हुगली का, और कौन जानता था कलकत्ता! क्लिनि साहब के जमाने से लोग तो सिर्फ सप्तग्राम के पास की नदी को ही देवी सुरेश्वरी गंगे कहते थे। उसके बाद समय के चढ़ाव उतार के अटूट नियम से जिस राज सतगाँव का पतन हुआ सामने आया हुगली, उसी राज पुनर्भवा की कृपा से भागीरथी का नाम हुआ हुगली।

किस्सा कहते हुए बूढ़े हाँफ उठते। कहते, पड़ा नहीं?

अजब शहर कलकत्ता
रांडी, बाड़ी, जोड़ी, गाड़ी, झूठ बात अलबत्ता
(यहाँ) जलते उपले, हँसता गोबर, बलिहारी एकता
बगुले बिल्ली ब्रह्मणियानी, बदमाशी का सत्ता।

चूड़ामणि चौधरी अलीपुर के वकील थे। बोले—अरे भाई किप-लिंग साहब ही तो लिख गए हैं—

Thus from the midday halt of Charnock

Grew a city
Chance directed chance erected laid and
Built
On the silt
Palace byre hovel poverty and pride
Side by side

महल के इन नये मालिकों को उन दिनों की कहानी नहीं मालूम। वारेन हेस्टिंग्स तो हम लोगों की तरह गुडगुडी पिया करता था। सुनते हैं बोतल की चिट्ठी में साफ तौर से लिखा रहता था 'कृपा करके हुक्काबरदार के सिवा दूसरा नौकर साथ लाने का कष्ट न उठाएँ।' और वह जाता चानक? बटकपान के उस बड़े बरगद के नीचे बैठकर हुक्का पीता था अंगूर खाता था और शाम होते ही चार डाकू के डर से बैरकपुर भाग जाता था। और तो और एक ब्राह्मन की बेटी से शादी ही कर ली! मजबूरी थी कलकत्ता गोविन्दपुर और सूतानूटी में बसने का प्रोग्राम बना। एक दिन आ धमके पुर्तगाज। अब उन्हें मुरगीहाटा में नया पाआग—आधा अंग्रेज आधा पुर्तगीज। नाम पड़ा था फिरंगी। दस्ट इण्डिया कम्पनी के शुरू के किरानी यही लोग थे। अचीर में बड़ा हुए जाकर अंग्रेज के चपरासी खानसामा और उनकी बाबियाँ बनी मेमों की आया। फिर आये आरमेनियन। उनमें से कुछ खुरासान काबुल के व्यापार छोड़कर दिल्ली आये थे। कोई कोई आये गुजरात सूरत बनारस बिहार होकर। उनके बाद दिनों तक वे चुचड़ा रहे। अन्त में आये कलकत्ता। उनके साथ आये ग्रीक आये यहूदी आये हिन्दू मुसलमान सब आये।

इस तरह बसा कलकत्ता। यह बात सन् १६९० की है।

दक्षिण का दखन पठान और मराठों का जमाना गुजर गया। एक सुबह को जब लोगों की आँख खुली तो देखा इन्द्रप्रस्थ और दिल्ली जाने कहाँ गुम हो गई। उसकी जगह सुन्दरवन की दलदल में एक और ही आबादी ने सिर उठाया। जादू हो गया। कलकत्ता की बात में राख बनता है राख बिगड़ता है। जिन्दगी में तरक्की के लिए यहाँ आना पड़ता है। बीमारी में परेशानी हो तो यहाँ आना पड़ता है।

पाप म गक होन के लिए यहाँ आना पड़ता है। महाराजा और भिख मगा होन के लिए यहाँ आना पड़ता है। इसीलिए मुतानूटी पहुँच रायान राजवल्लभ बहादुर। दीवान रामचरण और दीवान गगागोविन्द सिंह पहुच। फिर पहुँच वारेन हेस्टिंग्स क दीवान बाबू हीलर के दीवान दपनारायण ठाकुर, कलकत्ता क दीवान गोविन्दराम मित्र उमी चाँद और वनमाला सरकार। सरकार, यानी जिनके नाम की गली म बैठकर हम बातें कर रहे हैं।

चूडामणि चौधरी का मुवक्किल नहीं जुटत। काल कोट पर काफी कालिख पड चुकी है—समय की और उम्र की। हाथ म स्याही लगती कि कोट म पोछ डालन, पता ही नहीं चलता। कचहरी जाते हैं। काडे जिन्ह चाट गए है पुरखा की उन किताबो क पन्न पलटत। भई, तुम लोग तो खास मजे म हो। खाते पीत और सिनमा देखत हो। उन दिना सिर उठाकर चौरगी म चलन की मजाल भी थी किसी की? बूट की ठोकर म बच जाओ तो पिता का पुण्य समझो। तब की बहू—साहब रास्ते से जा रहा है। हाथ म है बेंत। दोनों तरफ के नेटिवा को मारता जा रहा है। गोया सब भेड बकरी हो। और गार पर नजर पडी नहीं कि हम सत्ताइस हाथ दूर। विवेक कहाँ उनक! आखिर नेटिव क्या आदमी नहीं? भैया, रेल क तीसरे दर्जे क डिब्बे म पाखाना नहीं था। नागपुर से आसनसोल तक आया पट दबाए। एक दाना मुह म नहीं डाला, एक बूद पानी नहीं, कहीं

मा चाहे जो भी हो इसम इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट का नोटिस जारी करन म क्या रुकावट! बडे महल क छोटे मालिको न नोटिस लिया।

इधर नोटिस आया और उधर आ धमकी जजीर कपास, सन्नल, छेनी, हथौडा, फावडा डिनामाइट कुली मजूर, लोक लश्कर। इन सबक साथ आया भूतनाथ, आवरगियर, भूतनाथ भूतनाथ चक्रवर्ती—मुकाम नदिया, गाँव फतपुर डाकखाना गाजना।

दोपहर को उठता गर्द का पहाड। दिन क छप्पर का उजाडन मे वक्त भी क्या लगता! भडभूजे की दूकान स लेकर सतुज मघ वाला मकान ढहा दिया जा चुका। सर्दियो क दिन। शाम का रस्से का छोर

थाम मजूर शार करत—

सम्हल जवान
हैया
गावान जवान
हैया
पूरी गरम
हया

लेकिन गरम पूरियाँ व नहीं खाते। दोपहर को खाने के लिए घण्टे भर की छुट्टी होती। मन्नू, हरी मिर्च और गुड़ का होता कलेवा उनका। बहू-बाजार स्ट्रीट में ट्राम की घड़घड़ उस समय क्षीण हो आती और उधर सण्ड्रल एवेन्यू में उतर आती अलसाई थकावट। श्री श्रीमहाकाली आश्रम के पीपल के नीचे जरा लेट लगा लेते सब। बनमाली सरकार खैनी की सांप जैसी शक्ल सीधी हो आई। टूटे मकान की समतल जमीन पर खड़े होकर मजूर खाते भी नहीं समझ पाते कि किस मजबूत की चोट में जिन्दगी के किस पर्दे का कौनसा सुर खामोश हो गया। एक एक ईंट गायब एक एक कंकाल हो। टूटी ईंट के साथ इतिहास का एक एक पन्ना चकनाचूर हो जाता और उनकी हवा में उड़कर आसमान को रंग देता।

कचहरी से लौटते हुए चूड़ामणि चौधरी पलटकर गौर करते। लगता आसमान लाल हो उठा है। ट्राम पर अगल बगल बैठे रहते दूसरे मुसाफिर भी मुंह बंद रखते। घर लौटकर पलटने लगते इतिहास के पन्ने। वहाँ, कब सिराजुद्दौला ने शहर को फूंक डाला था। देखते ही देखते फिर कलकत्ता नये सिरे से बस गया। वह कलकत्ता मानो नये सिरे से बसने के लिए आज फिर जल रहा है। अच्छा ही हुआ। बेतरह जहर जम गया था यहाँ। कमरों में खुली हवा को घुसने की राह न थी। परम्परा में बड़े महल की वह दशा हो गई थी कि मालिकों का पास पास रहना मुहाल। उस राज का तो खैर है चौथी का कोई बंधन था पहले का। उसी के लिए मुकम्मल का नौबत आ गई। आज के इन लड़कों ने उस समय को देखा कहाँ? चूड़ामणि चौधरी भी निहायत बच्चे थे। मझली चाची की

गुड़िया के ब्याह में फ्रांस से मोती के जेवर आए थे। मँझले बाबू के कबूतर के लिए ठनठनिया के दत्त लोगों से हो गया मुकदमा। मुकदमा तो मुकदमा तीन साल तक चला। उस समय की बहुत बड़ी गायिका थी कज्जन बाई। होली के दिन गाने आई थी। तबले पर संगत की थी बम दाम बाबू ने। उस समय बड़ों की बैठक में छोटों को जाने की इजाजत न थी। दफ्तर के किवाड़ की फाँक में से झाँक झाँककर देखा था। नाच का क्या कहना! दस साल बाद वही कज्जन बाई फिर एक बार आई थी। रूप हवा हो चुका था। मँझली चाची से कुछ माँग ले गई थी। बहुत कहने सुनने पर गाया। वही गीत जो दस साल पहले सुना गई थी।

बाजूबन्द खुल खुल जाय

भरवी के ये मोड़ बड़े ही मीठे लगे थे। बुढ़िया के गले में तब भी जस जादू भरा हो। ठुमरी की तो माहिर थी कज्जन बाई। आज के लड़कों को यह गीत कहाँ नसीब!

कचहरी आते जाते ट्राम के झरोखे से उस घर का दरवाजा उन्होंने। एक तरफ का सब ताला जा चुका था। महल का अभी हाथ नहीं लगाया था, इधर साफ-सुथरा करके उधर। चूड़ामणि के जी में आया, अभी भी कुछ है। आँखें बन्द करते ही उन्हें मानो सभी दिखाई पड़ता। यह आ लगी डेवढ़ी पर पालकी। मँझली चाची का दुलारी दाई गिरि रेशमी थान पहने आ खड़ी हुई। गिरिजासिंह ने सदर फाटक पर घण्टा बजा दिया—हटो, हटो, पालकी आ रही है। छोटा हो चाहे बड़ा, सभी योग में मँझली चाची का गंगा स्नान जरूरी है। उसके बाद जो में आया ठीक ही हुआ। बड़े महल में एक भी नौकर न रहा। बड़े बाबू का खास नौकर था मधुसूदन, सभी नौकरों का सरदार। दशहरे के दिनों वह भी एक दिन अपने घर गया और गया सो गया।

चूड़ामणि ने आँखें जब खोलीं, तो ट्राम हाथीबगान के पास से गुजर रही थी। भीड़ पतली हो आई थी। अपने काले कोट की जेबों में दोनों हाथ डालकर वे चुप बैठे रहे और सोचने लगे, घर पहुँचकर कोटन साहब वाला इतिहास पढ़ना है और बसटीड की किताब, सर फिलिप फ्रांसिस में मदेम ग्रैंड की प्रेम-कहानी। क्या मौज उड़ा गए हैं ये! सात समुंदर

पार से आये जाब चानक और उनके छः सहकारी। साथ में सिर्फ तीस सैनिक। अकबर बादशाह भी ख्वाब में इतनी बड़ी सल्तनत की नहीं सोच सके थे।

पीतल की जूठी थालियों को धो पोछकर मजूर फिर ईंट तोड़ने लगे। धप्प धुप्प! चूना सुरखी की बुकनी उड़ने लगी ऊपर। गर्द से भर जाने लगा चेहरा आँखें। ठेकेदार का आदमी फिर भी कड़ी निगाह रखता। आंखों में धूल न झोंक कोई। साहब कम्पनी ने बनाया यह शहर बनाई सड़कें। बड़े बड़े तालाब खुदवाए। नल लगवाए। सिर के ऊपर जलते हैं बिजली के लट्टू, घूमते हैं पंखे। सब-कुछ साहब कम्पनी ने दिया है। इस धनमाली सरकार ने का तोड़कर भी वह देश का कोई उपकार जरूर करेगी। कौन जाने!

सलाम हुजूर—कहकर बेंजू खिसककर खड़ा हो गया।

सलाम हुजूर—मुस्तैद सब्बल की चोट रोककर दुखमोचन भी अदब से खड़ा हो गया।

हर कदम पर सलाम लेता हुआ चलने लगा भूतनाथ। भूतनाथ चक्रवर्ती। वह सीधे महल के सदर दरवाजे पर जा खड़ा हुआ।

कुलियों का सरदार चरित्तर मंडल सामने आया और उसने झुककर सलाम बजाया।

भूतनाथ ने सिर नवाया, पूछा—निशान तैयार हो गया चरित्तर?

चरित्तर ने सिर हिलाया—आज बड़ा निशान लगाना होगा हुजूर! कल और भी चालीस मजदूर बढ़ा रहा हूं। उधर का काम तो खत्म कर दिया। शाम तक सब बराबर करके ही दूंगा छुट्टी मिलेगी।

भूतनाथ ने एक बार चारों तरफ निगाह फैलाकर देखा। बहुत दिन पहले ही सब मिट चला था। जितना कुछ बचा खुचा है अब उसका भी मेट डालना है। इस खानदान में जाने कहाँ जाने कब सनीचर की तरह कोई अभिशाप घुस गया था चुपचाप, अब जाकर अंत हुआ उसका।

चरित्तर ने फिर पूछा—तो कल उस निशान पर हाथ लगाएंगे हुजूर?

कभी इसी मकान में आश्रय पाकर भूतनाथ ने अपने को धन्य समझा

घड और भी तीखी हो उठी। राहों पर दमक उठीं बत्तियाँ। मगर वनमाली सरकार लेन में अब से न जलेगी रोशनी। लोग नहीं चलेंगे। और इतिहास से वनमाली सरकार का नामोनिशान मिट जाएगा।

वनमाली सरकार के साथ-साथ इस घर का इतिहास भी तो खो जाएगा। जी में यह बात आते ही भूतनाथ कैसा बेबस सा हो गया। फिर अगल-बगल चौकन्नी निगाह डालकर, चट से सदर दरवाजे होकर अन्दर घुस पड़ा। कोई कहीं नहीं। उसे देखेगा ही कौन ? लेकिन कोई देख ही ले तो उसे शायद पागल समझे। घड़ीघर के पास अपनी साइकिल टिकाकर वह सीधा बढ़ चला।

खूब याद है उस समय इसी घड़ीघर के घण्टे पर इस घर का सारा कारोबार चलता था।

सुबह छ बजे एक घण्टा बजता। ब्रजराखाल उससे भी पहले उठ बैठता। उस वक्त तक उसकी नित्य क्रियाएँ खत्म हो चुकी होतीं। उस समय तक वह पत्थर के बर्तन में मिगोय चने नमक और अदरक के साथ बैठा-बैठा चबाता होता। बार-बार ताकीद करता—भई भूतनाथ, उठो उठो।

अँगड़ाई लेकर उठ बैठने में भूतनाथ को देर ही हो जाती। अस्तबल में घोड़ों की मलाई की आवाज तब भी आती होती—छप छप हिस् हिस् कल्प् कल्प। उधर दरबान बिरिजसिंह और नत्थूसिंह की तड़प से डण्ड बैठक की आती हुम् हुम् आवाज। सामने सीमण्ट के अँगने से दासू जमादार के बुहारू की खरखराहट। इन सबसे मालूम पड़ जाता कि सवेरा हो गया। आँखें बन्द किये अब क्या पड़े रहना ! डेवढ़ी को पार करके भूतनाथ और आगे बढ़ गया।

बाईं तरफ के इस कमरे में रहता था इब्राहीम। उसकी गलपट्टा दाढ़ी की भूतनाथ को आज भी याद आती है। छत के बरामदे में लकड़ी की कुर्सी लिये मालीन साईस इब्राहीम के बाल जो झाड़ रहा है सो झाड़ ही रहा है। इब्राहीम के मन लायक होता ही नहीं। हाथ के आईने में सिर झुकाए इब्राहीम अपने बालों की बहार देखने में मगन। किसी बात का ख्याल नहीं। फिर एकाएक वह उठ खड़ा होता। उठ

खड़ा होना यानी बाल मन लायक सँवारा गया। उसके बाद खुर्दा कंघी लेकर वह अपनी पठानी दाढ़ी ठीक करने लगता। सुबह के सात बजे तक चलता यह क्रम।

भूतनाथ और आगे बढ़ा। ओवरसियर भूतनाथ की आँखों के आगे मानो इतिहास का सिंहद्वार खुलने लगा। साँझ हो आई। लेकिन वह चालीस पचास, साठ सत्तर सौ डेढ़सौ साल पीछे को निकल गया मानो। काल का रथचक्र जैसे घूमने लगा। अठारहवीं सदी के मुर्शीदकुली खाँ के कानूनगो के खानदान का आखिरी चिराग बद्रीबाबू मानो सामने के इक-मंजिले की बैठक में चटाई बिछे तख्त पर एकाएक उठकर बैठ गए।

आमतौर से बद्रीबाबू ठीक उसी तरह उसी तख्त पर पैर पर-पैर रखे चित लेटे रहते। उनके डर से उस कमरे की छाँह नहीं छूता कोई। फिर भी किसी पर निगाह पड़नी चाहिए। देखा नहीं कि पुकारा। बुला कर पास बिठाया। कमर में होती एक छोटी सी घड़ी। कहते—क्यों छोकर घर कहाँ है?

—बाप का नाम?

—कौनसा गाँव? जिला?

—वहाँ बाम्हन-कायथ कितने घर हैं?

—फी बीघा धान कितना होता है?

—दूध क्या भाव?

सवालों की झड़ी लगा देते। ऊब जाते लोग। गर्मियों में नंगे बदन रहते। कंधे पर एक चादर। सर्दियों में रुई की बण्डी। उन्हें देखकर शुरू में किसी को गुबहा नहीं होता। सीधे सादे से आदमी। लेकिन कहीं शुरू कर दी कहानी तो खत्म होने की नहीं। मुर्शीदकुली खाँ से लेकर लार्ड क्लाइव टालसीबगान कासिमबाजार और फिलिप फ्रांसिस वारेन हेस्टिंग्स, नन्दकुमार सुनने का धीरज नहीं रहता। रात के नौ बजे क्लिर्क की ताव छूटती कि उछलकर बिस्तर पर उठ बैठते। लम्बी जम्हाई लेते और चुटकी बजाकर जोर से चिल्ला पड़ते—बम काली कलकत्ते वाली! फिर कमर से घड़ी निकालकर उसे मिला लेते।

बाईं तरफ बद्रीबाबू का बैठक और दाएँ खजांचीखाना। खजांची-

खाना, यानी विधु सरकार का कमरा। अपने आगे काठ का एक ढालू बक्स लिये बैठा रहता। नाक पर चूलता हुआ चश्मा। चटाई पर उकड़ू बैठकर बक्स खोला करता। उस बक्स और ताखियों के बक्स पर विधु सरकार की बेहद निष्ठा। उसके लिए ठनठनिया काली मन्दिर से रोज ही फूल और तेल सिंदूर आता। अपने हाथ से वह कुन्जी के सूराख में एक त्रिशूल बनाता। दूसरा त्रिशूल बनाता दीवार की तिजोरी की कुन्जी के छेद में।

सामने ही फर्श पर बाकी रुपया के लिए बैठा बक्सवाला। मगर उधर विधु सरकार की नजर ही नहीं पड़ सकती।

त्रिशूल आंक लेने के बाद विधु सरकार बक्स को खोलता। खोलकर उसके अन्दर फूल रखता। उसके बाद निकाल लाता एक छोटी सी धूपदानी। यह अपनी धूपदानी थी उसकी। एक छोटे से डिब्बे से निकालता फिर धूप, कोयला और दियासलाई। दियासलाई जलाकर धूप जलाता। जलाकर पंखा झलता। जब धकाधक धुआँ निकलने लगता, धुएँ से उसकी नाक, आँख, चेहरा सब ढक जाता, तब एक मजे की बात करता। आग समेत उस धूपदानी को बक्स के अन्दर डालकर धप्प से बक्स के ढक्कन को गिरा देता। झुककर बक्स पर माथा टेक देर तक नमस्कार करता और तब बक्स खोलकर अन्दर से धूपदानी को निकालता। फिर शुरू होता काम। टप्प से सामने वाले से पूछता—हाँ भई, अब कहो क्या है?

खजांची के काम में विधु सरकार जैसी निष्ठा भूतनाथ ने और किसी में नहीं देखी।

दो तरफ दो कमरे। बीच से बाहरी महल में जाने का रास्ता। रास्ते के उस तरफ बाहरी महल का आँगन। आँगन के दक्खिन पूजा-दालान। अब भी वैसा ही है वह, आस पास की और और चीजें बदल गई हैं। संगमरमर की ताखियाँ सब टूट फूट गई हैं। दुर्गापूजा शायद अब भी चल रही थी। वह नहीं बन्द हुई।

एक बार नवमी पूजा के दिन एक अजीब वाकया गुजरा। सुनी हुई कहानी है। वाकया यही हुआ था।

पूजा हो चुकी थी। प्रसाद बँट रहा था। तसर का वस्त्र पहने बुढ़िया नौदी पुरोहितजी के लिए नवेद्य की थालियाँ गिन गिनकर उठा रही थी। प्रसाद के लिए रसोई, गोला, अस्तबल, जो जहाँ थे, वहीं से दौड़कर आये। अन्दर महल के लिए प्रसाद भेजा गया।

और भिस्तीखाना बावर्चीखाना, नहबतखाना दफ्तर गाड़ीखाना, जहाँ से छुट्टी पाकर लोग आ नहीं सके, प्रसाद भेजा गया।

दालान ड्योढ़ी, नाचघर स्कूल—सब लोग प्रसाद खा रहे थे। अचानक एक घटना घट गई।

—मैं नहीं खाऊँगा।

—क्यों भला ?

—पूजा नहीं हुई है।

—पूजा नहीं हुई—यह कैसी बात—तू है कौन ?

—मैं हूँ हाबू।

—कहाँ का हाबू ? कौन हाबू ? घर कहाँ है तेरा ?

भीड़ लग गई। सबकी जबान पर एक सवाल—हुआ क्या ? है कौन यह ? किसके घर का है ? मगर शकल से ही तो पहचान लेना चाहिए था। पगला है पगला ! किसी को भी ख्याल न आया कि उसे कभी कहीं देखा है। अधमैला कपड़ा नंगा बदन पाँवों में गर्द बिखरे बाल, उदास नजर। नहीं खाया तो बला से ! खुशामद करो क्यों ? उँह आसन बिछाकर —आइए बैठिए—कहना पड़ेगा क्या ! भगा दो। भगा दो उसे।

मझले बाबू के कानों तक गई बात। दौड़े आये। कहाते ही सिर्फ मझले बाबू हैं—हकीकत में मालिक वही हैं। तसर की धोती, तसर की चादर। कपाल पर चन्दन का टीका। गम्भीर से आदमी। साफ घुटी दाढ़ी, केवल होठों के ऊपर दो ओर को निकली तीखी नुकीली मूछ। बदन से आती हुई इत्र की बू और उसको भी दबाती हुई निकल रही थी दूसरी कोई तेज गन्ध। तजुर्बेकारों को पता है कि वह गन्ध बड़ी दामी होती है—कीमती इत्र की गन्ध से भी दामी। मझले बाबू को देखकर सब बाअदब हटकर खड़े हो गए। आकर वे बोले, कहाँ है—देखूँ मैं—

शकल उसकी देखने लायक तो न थी। कोई डर नहीं। सकपकाहट

नहीं। मझले बाबू को देखकर नमस्कार भी नहीं। टकटकी लगाए एक ओर को खड़ा था, बस।

बाबू ने पूछा—क्यों रे, प्रसाद क्या नहीं खाता ?

—जी पूजा नहीं हुई है।

—पूजा नहीं हुई है ? यानी ?

प्रतिमा में प्राण प्रतिष्ठा नहीं हुई।

मझले बाबू नहीं हँसे। हँसे रूपलाल पुरोहित। वह भी वहीं आकर खड़े थे। पाँवों में खड़ाऊँ। तसर की धोती। नामावली। माथे की लम्बी चुटिया में फूल बंधा। बोले—पगले की बात पर कान नहीं देते, आइए आप।

मगर मझले बाबू इतना सहज ही मानने वाले न थे। बोले—जी नहीं, नवमी के दिन अतिथि अपने यहाँ भूखा रह जाए, यह ठीक नहीं।

रूपलाल ठाकुर कुछ विस्मित हुए। पूछा—प्रतिमा में प्राण प्रतिष्ठा नहीं हुई यह तूने कैसे जाना ?

पगले ने कहा—दर्पण में भोग कहाँ कबूला ?

रूपलाल ठाकुर अब खीझ उठे।

भीड़ में भी एक कौतूहल सा आया।

रूपलाल ठाकुर ने पूछा—तो प्राण प्रतिष्ठा होगी कैसे ?

—मैं करूँगा।

—तू ब्राह्मण है ?

—जी, माँ के लिए ब्राह्मण और शूद्र क्या, माँ तो जगदम्बा हैं, जगत-जननी।

पगले की इस बात पर सब चौकन्ने से हो गए। बात तो बड़ी है। लगा कि मझले बाबू को कुछ मजा आ रहा है। और दिनों से आज कुछ ज्यादा मौज में थे भी। आज कैसा मीठा मीठा हँस रहे थे—अच्छा तो प्राण प्रतिष्ठा कर तू।—जब कह रहा है तो करे।

रूपलाल ठाकुर विरोध करना चाह रहे थे, मगर बेकार। मझले बाबू पर किसी की नहीं चलती।

तब तक खबर चारों तरफ फैल गई। बाहरी दालान से सारे लोग

बटुर आये। कोई कहने लगा, यह कोई छिपा हुआ साधु है। उससे बात करने को भी जी ललचाने लगा। रसोई छोड़कर सारे महाराज आ जुटे। सिर्फ मझले बाबू के डर से आगे आने की किसी को हिम्मत नहीं पड़ रही थी। नाती पोता के साथ एक कोने में खड़ा था दासू मेहतर। आज चौनी मिल का कोट पहने था बन्द गले का। बाल-बच्चों ने भी नये-नये कपड़े पहने थे।

पगला बाबू को पूजा मण्डप में ले जाया गया। कर, प्राण प्रतिष्ठा कर।

—केले के बखल चाहिए।

—वह क्या होगा?

—लाकर दो भी तो, देखो, क्या करता हूं। दक्खिन के बगीचे से लाया गया आखिर केले का बखला। मझले बाबू का हुक्म। जरा तमाशा ही देखा जाए। पूजा वूजा में मजे उड़ाने और मजा देखने को हो तो आना। संगमरमर की सीढ़ी पर लोग भीड़ लगाकर खड़े हो गए। उचक कर पगले की तरफ देखने लगे।

पगला लेकिन कतई निर्विकार। तज हंसिये से केले के बखलों को छोटा छोटा करके काटा। उसके बाद की कहिए मत! एक एक टुकड़े को उठाकर जोर जोर से क्या तो पढ़ने और प्रतिमा पर फेंककर मारने लगा। हाथ पर आंख-नाक—सर्वांग में।

रूपलाल ठाकुर रोकने जा रहे थे, लेकिन मझले बाबू की तरफ देखकर साहस न हुआ। मझले बाबू एकटक उस पगले को देखते हुए मीठा मीठा हँस रहे थे।

और इधर पगला प्रतिमा पर बखले फेंक रहा था और फेंक रहा था। ताकत क्या गजब की! अचानक हैरत में आकर लोगों ने देखा, प्रतिमा के बदन से चोट की जगहों पर लहू टपक रहा है। बखले की चोट लगी और प्रतिमा के बदन से खून टपका। लोग तो दंग रह गए।

और बीच में वह थम गया। मझले बाबू से कहा—हो गई अब प्राण प्रतिष्ठा अब मैं प्रणाम गाऊँगा, दो।

गजब की भीड़! फिर भी भीड़ को चीरकर ही प्रसाद लाने के लिए

आदमी गया। बात-की बात में इस उस घर इस उस मुहल्ले में खबर फैल गई। नाटशाला और ठनठनिया के दत्त परिवार से, पोस्ता के शोभा बाजार के राजबाड़ी से जोड़ा सांको के ठाकुर परिवार से, मल्लिका के यहाँ से तमाम से एक एक करके लोग आने लगे।

इधर अन्दर से प्रसाद आया। मझले बाबू का हुक्म, उसे बिठाकर भली तरह प्रसाद खिलाना होगा।

लेकिन पगला हो गया गायब।

ढूंढ़, ढूंढ उसे, कहाँ गया? हर तरफ लोग दौड़े। मगर कहीं पता नहीं। पगला जो गायब हुआ सो हुआ। फिर उसे किसी ने कभी नहीं देखा।

लोगों का तांता वैसा ही लगा था। सब पगले को देखने के लिए बेताब। प्रतिमा के बदन पर तब भी लहू था—ताजा लहू। वैसी ही भीड़ लगी रही तमाम दिन, तमाम रात—

पुराने महल के खण्डहरों से चलते हुए भूतनाथ मानो अतीत के आवर्त में डूब गया था। अचानक बंशी की आवाज से वह आपे में आया।

—मेजो साहब।

—मुझे कह रहे हो बंशी। भूतनाथ ने मुड़कर ताका।

—छोटी माँ आपको जरा बुला रही हैं।

आज वह उम्र न रही भूतनाथ की। बहुत उम्र हो चुकी। फिर भी इस सूनी मसानपुरी में खड़े हो, उस दिन की छोटी बहू की बुलाहट को वह टाल नहीं सका। आज न तो वह घर वैसा है, न वैसी बातें हैं। पार्टीशन और पार्टीशन, पिछले दिनों का वह सिंह दरवाजा बन्द हो जाने की नौबत। जो हो, छोटी बहू की बुलाहट पर भूतनाथ चुप कैसे रहता!

—अच्छा तू जा बंशी! मैं अभी आया। भूतनाथ उठा। बाहरमहल के बाद अन्दरमहल। अन्दरमहल घुसते ही मानो उस गिरि से सहसा मुलाकात। यह मझली मालकिन के लिए पान लगाने आई थी। आई और सौदामिनी से झगड़ पड़ी।

सौदामिनी की आवाज बड़ी तेज। बोली—या भगवान् नसीबा फूटा, जभी तो पराए घर समाग कूटन आइ हू।

—देख समाग का उलाहना तू मत द सौदा कह दती हू मैं तेरे समाग म कीड पड़ेंगे। और उसी कीडेवाल समाग का मुदाफरोश एक दिन निमतल्ले म फकेंगे—देख लेना।

—हाँ री गिरि—समाग का उलाहना तन दिया कि मैंन—जो समागखार है वही समाग का जन्म-जन्म उलाहना द।

—ऐं तरी यह मजाल! समागखोर कहगी तू मुझे—कहती हूँ जाकर मझली मालकिन स—कहकर लकडी क जीन स खटाखट जाने लगी कि सामन भूतनाथ को दखकर ठिठक गई—फिर जीभ काटकर घूघट काढती हुई बगल होकर उसन रास्ता छोड दिया।

वही सूनी सीढी। वही सूना अन्दरमहल। जद्दू की माँ, कहाँ गई वह! रसोई स लगा लगा जा छोटा सा कमरा है उसी म बैठी पीसती ही चला जा रही है मसाला। धनिया हल्दी का पानी चौतरे से होकर नाल म बह रहा है। कब सूरज डूबता और कब उगता कब जाडा वसन्त आता और चला जाता, उस बुढिया बेचारी का खाक भी खबर नही होती। जब हाथ म काम नही होता, दोपहर का तो दाल चुना करती। मूग मसूर खिसारी, चना—और भी जान कितनी तरह की दाल। जुबान पर बात नही। काम कि काम। इसी व्यस्तता की फाक मे स कब जो उसकी जिन्दगी टूट गिरी, किसी को इसकी खबर नही। भूतनाथ सीढी पर कदम रख ही रहा था कि पीछे स फिर पुकार हुई—साल साहब!

पलटकर ताका भूतनाथ ने। नौकर पुकार रहा था। साले साहब, जरा जल्दी आइए।

—क्या?

—नन्ह बाबू बुला रह है—आज गुसाइजी नही आय—गाना-बजाना ठप पड गया है।

नन्ह बाबू की बठक म आज शायद तबलची नही है। नन्ह बाबू छडत तानपूरा और उधर बाना धीरू अलापता ईमन का खयाल।

तबला गोसाइजी। सम आते-आते हा हा का ऐसा शोर कि हाल खराब। घर टूट गिरने की नौबत। बहुत रात गए तक यह क्रम चलता। किसी-किसी दिन बनता गोश्त। मुर्गी का शोरबा और पराठा। रह रहकर एक एक आदमी परदे के पीछे चला जाता और जरा देर में मुंह पोंछते हुए लौट आता।

मलमल का महीन कुरता पसीने से तरबतर हो जाता नन्हे बाबू का। लाल ताल पर घूमता रहता सिर। गले की मोती वाली पतली जंजीर बिजली की रोशनी में चक् चक करती। कहते, कोई परवा नहीं भइ लाल साहब, तबले का भार अब से तुम उठा लो। कम्बख्त गुसाइं बेहद गरज हो गया है—शादी, कल गुसाइं आए तो उसे जूते मारकर निकाल बाहर करना—देखता हूँ मैं।

लेकिन भूतनाथ को याद आ जाती ब्रजराखाल की बात। उन लोगों में ऐसा घुलना मिलना क्या भया, ये बाबू लोग हैं साहब की जात और हम ठहरे उनके गुलाम—गुलामों में भी साहब बीबियों का मन बैठ सकता है! हाशियार।

सो भूतनाथ ने कहा—नन्हे बाबू से जाकर कह दो दासी कि मुझे छोटी बहू ने बुलवा भेजा है। भूतनाथ सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। दुतल्ले पर लम्बा बरामदा। दाइं तरफ रेलिंग। चौक सा महल। चारों तरफ रेलिंग। रेलिंग से झुककर नीचे झाँकिए तो हौज और आँगन दीखता है। मँझली चाची रसोई से खाना ले जाकर इकतल्ले के भंडार में रखती। यहाँ खड़े-खड़े यह भी दीखता कि जद्दू की मा एक सांस पीसे जा रही है मसाला रोज रोज। उसी के पास जो खिड़की है, उसमें से नाजघर के फर्श का थोड़ा-सा हिस्सा दिखाई पड़ता है और वहीं बैठी सौदामिनी तारकश्वर के एक बड़े से हँसिये से तरकारी काट रही है। आलू, बैंगन, कद्दू। चारों तरफ अनाज का पहाड़-सा अम्बार और उसी के बीच बैठी अकेली सौदामिनी। या तो तरकारी काट रही है या पान लगा रही है। या साँझ के लिए दीयों की बत्ती बना रही है। उसके बटन की जगह थी खिड़की के उस तरफ। काम भी करती जा रही है, बकती भी चली जा रही है। किससे बतिया रही है, कौन जाने।

गोया, आप ही आप बके चली जा रही है—आँख गई तो तिरभुवन गया—भोला का बप्पा जभी कहते थे फूलबहू निगाह होते हुए ही तिरभुवन का चीह्न ला—सो न तो रहा भोला का बप्पा न रहा भोला—अब मैं मरने को पराए दरवाजे दीया जलाती हूँ—अपने पति का घर घुपघुप अंधेरा पड़ा है।

बाते जद्दू की माँ के काना जाती। मगर वह न तो किसी के छह में न पाच में। मगर गिरि सुनती नहीं कि पूछ बैठती यह बकबक किससे कर रही है री सौदामिनी—। सौदामिनी चट चुप हो जाती।

रेलिंग के सहारे बढ़ चला भूतनाथ। टूटी रेलिंग। गोया भूखे जानवर सी हाँ किए हो। इसके बाद दाएँ फिर बाएँ मुड़कर वह गली वह गली पार करके उत्तर की तरफ तीन चार थाप चढ़कर तब बहुओं का महल। आसमान छूती लकड़ी की झिलमिली से घिरा। उसी के सामने दक्षिण रुख बहुओं के कमरे। छोटी बहू का कमरा सबसे आखिर में। इसे सबसे पहले पड़ता बड़ी बहू का कमरा। विधवा थी बेचारी। कहाँ से जो आई थी इस घर की बहू। मेम साहबों सा गोरा चिट्टा रंग। दूधिया महावर। बड़ी बहू की उम्र हो आई थी मगर देखकर उम्र की पहचान का उपाय न था। सफेद कोर की धवधव साफ धोती।

भूतनाथ को देखकर सिधु बगल हो गई। सिधु थी बड़ी बहू की दाई।

अन्दर से आवाज आई—कौन है रे सिधु ?

भूतनाथ ने सिधु को कहते सुना—जी, मास्टर साहब के साले हैं।

उसके बाद ही था मझली बहू का कमरा। पर्दा उठा हुआ था। लमहे को भूतनाथ की निगाह पड़ी। मझली बहू फर्श पर तकिये के सहारे लेटी गिरि के साथ बाघबोटा खेल रही थी। अपनी नजर उधर से खींचकर भूतनाथ एकबारगी आखिरी कमरे के सामने जाकर खड़ा हुआ।

आहट होते ही किसने तो मानो दरवाजा खोल दिया। कितने वर्षों की घटना है यह लेकिन अतीत का माया अंजन आज भी गोया, आँखों पर लगा हो। स्मृति के पंछी की पीठ पर सवार होकर वर्तमान से बाहर भूतनाथ मानो अतीत के अरण्य में जा निकला है। किवाड़ के पल्ले हटाकर छोटी बहू ने कहा कौन भूतनाथ, आ जा।

अचानक छोटी बहू ने उसके दोनो हाथ थाम लिए। तुझे एक काम कर देना पडेगा, भैया, कहकर छोटी बहू न अपनी काली काली आखें उठाकर उसे ताका। इसीलिए बुलवाया है।

—कौन सा काम ?

—यह रुपया ले—और उसने भूतनाथ की मुट्ठी म रख दिया रुपया।

—क्या लाऊ इसका ? भूतनाथ ने पूछा।

—शराब। गदन झुकाकर छोटी बहू बोली।

भूतनाथ सचमुच ही चौंक उठा। शराब ? धोखा तो नही दे रहे हैं कान !

—हाँ, शराब।

—इतनी रात को !

—हाँ हाँ। जहाँ से हो जैसे हो। उमदा शराब, खूब दामी कहने के बाद भी छोटी बहू को भरोसा न हुआ। अचानक अपने कान से हीरे का करनफूल खोलकर उसने जबदस्ती भूतनाथ की मुट्ठी मे भर दिया। बोली—उस रुपये स शायद काम न चले इसीलिए इसे भी रख ले।

—यह क्या, किया क्या तुमने बहू—भूतनाथ जसे चीख पडा। बगल से दौडी दौडी आ गइ गिरि, मझली बहू, सिंधु बडी बहू। क्या हुआ ? क्या हुआ छोटी बहू ?

भूतनाथ खुद अप्रतिभ हो उठा अपनी चीख से। छोटी बहू नही, भूतनाथ ही मारे शम के गडा सा खडा रहा। बुढापे मे आखिर यह किया क्या उसने ? यहाँ तो कही कोई नही। आज तो महज वही अकेला खडा है इस टूटे घर म। वह तो इम्प्रूवमट ट्रस्ट का ओवरसियर भूतनाथ है भूतनाथ चक्रवर्ती। मुकाम नदिया—गाव फनेहपुर—डाकखाना गाजना। इसमें राई रत्ती भूल नही। हीरे के करनफूल को देखने के लिए उसने अपनी मुट्ठी खोली। मुट्ठी म सिफ साइकिल की ताली थी। अचानक उस डर लग आया। यह घर अभिशप्त है। अच्छा ही हुआ कि इसका नाश हो रहा है। उतन ऊँचे से कूद जाने का जी होने लगा। यहाँ की जहरीली आबहवा से जितनी जल्दी भाग जाया जा सके उतना ही अच्छा। कल ही चरित्तर मण्डल काम शुरू करेगा। इस गली की

यादगार के साथ ही साथ चौधरी परिवार का इतिहास भी एकबारगी मिट जाएगा। मिट ही जाए। मिट जाना ही ठीक है।

अन्दरमहल ड्योढ़ी बाहरमहल बैठका दफ्तर डेवढ़ी सब पार करके भूतनाथ फटफट अपनी साइकिल उठाने जा ही रहा था कि किसी ने मानो उसके कपड़े को खींचा। वह मारे भय के चीखना ही चाहता। लेकिन गौर करके उसने लात मारी।

—हट दूर जा!

वही कुत्ता था!

बहुत दिन पहले और एक रोज इसी तरह इस घर को छोड़कर जाने में बाधा दी थी छोटी बहू ने। और आज इस कुत्ते ने रोका।

साइकिल से उस अंधेरी गली को पार करते हुए भूतनाथ को लगने लगा उसका सारा अतीत इस कुत्ते ही की तरह मानो उसे पीछे खींचना चाह रहा है। उसका अतीत इस कुत्ते जैसा ही काला रोगी मरणासन्न और धुंधला है।

उसकी साइकिल का पहिया जैसे-जैसे घूमने लगा उसकी नस-नस में भूला हुआ सा उसका कहानी मुखर अतीत उभर-उभर आने लगा।

कहानी

फतेहपुर से तीन कोस पैदल चलने पर पड़ता था माजदिया स्टेशन। एक दिन उसी स्टेशन से गाड़ी पर सवार होकर भूतनाथ कलकत्ते आया था।

ख्यालदा स्टेशन की शक्ल, भीड़ भाड़, शोरगुल और शहर का नजारा देख अवाक रह गया वह। आ कहाँ निकला! कुलियों की छीना झपटी से बचकर किसी कदर बाहर आया। जेब में दो रुपये पड़े थे, उन्हें उसने टैक्सी के हवाले किया। ब्रजराखाल ने कहा था, होशियार, जेब में रुपये न हों, वरना छूमन्तर समझो। कलकत्ता शहर आखिर तुम्हारा फतेहपुर नहीं कि—

यह तो भूतनाथ को पता था कि कलकत्ता शहर फतेहपुर नहीं है। उस बार एक नाटक की किताब लेने के लिए मल्लिका के यहाँ का तारा पद्दो कलकत्ते आया था। हरिश्चन्द्र नाटक। उसी से सुन रखा था। उसने कहा था, यह जो मिस्तिरी का वह बड़ा सा चालता पेड़ है न, उससे भी हजार हजार गुने ऊँचे हैं यहाँ के मकान, समझ गए चाचा—और देखता क्या हूँ कि उन बड़े मकानों के माथे पर खड़ी गन्दी औरतें मजे में रास्ता देख रही हैं—

भूषण चाचा उमरवाले आदमी। अगाध रुपये। तो भी कभी कलकत्ते नहीं गये। जाने की जरूरत भी नहीं पड़ी। चाचा ने पूछा—सिर पर घूंघट वूंघट कुछ नहीं? तारापद्दो ने कहा—आखिर घूंघट क्यों लें, किस दुःख से—अरे, उन्हें खाक देख भी पाता है कोई—मैंने रास्ते पर

से देखा तो इतनी-सी ता लग रहा थी पाँचवीं उंगली नमी—

भूषण चाचा बोले—क्यों भइ सुना है, कलकत्ते म आजकल ब्याहता औरतें सिंदूर नहीं पहनतीं—घूंघट उघारे खसम के साथ बग्गी पर हवा खोरी का निकलती हैं ससुर-जेठ के सामने पति से बातें करती हैं ?

—झूठ सरासर झूठ है चाचा—तारापदा सिर हिलाने लगा। ऐसा नहीं हो सकता मैं तो अपनी आँखों सब-कुछ देख आया। समझ लो कि सुबह गाड़ी से उतरा और फिर साँझ को आनेवाली गाड़ी पकड़ी—कलकत्ते का कुछ भी नहीं छोड़ा चाचा सब देखा—रानाघाट से खरीदकर ले गया था डबलरोटी और माजरिया के रसगुल्ले—भर पेट खा लिया और एक-एक कर सब कुछ देखा। पाड़े की टाम देखी वह जोर की चलती है कि पूछो मत चाचा ! सामने से गुजरती है तो छाती धड़कने लगती है।

—क्या छाती क्या धड़कने लगती है ?—भूतनाथ ने पूछा था।

जवाब लेकिन चाचा ने दिया था—तू चुप भी रह मुतू बेवकूफ जैसी बातें न कर लोग हँसेंगे।

सच ही भूतनाथ फिर न बोला। सुनता रहा।

तारापदा ने कहा था, जी में आता है चाचा इस मुतू को एक बार वहाँ के रास्ते पर छोड़ दूँ—यकीन मानिए यह जरूर फुक्का फाड़कर रो पड़ेगा—

भूषण चाचा ने भी तजुर्बेकार जमा कहा था—और क्या यह भी क्या श्रीनाथपुर के राजन का भला है कि रात भी हो गई तो परवाह नहीं चूड़ा मुरमुरा खाकर हलवाई की दुकान पर ही पड़ रहिए।

तारापदा का जुबानी सुनकर कलकत्ते के नाम से छुटपन से ही रोमांच हो आता था भूतनाथ को। एक रोज वह मिस्तिरी के चालता पड़ का फुनगी पर तक चढ़ गया था। उसमें भी हजार गुना बड़ा। वह ऊँचाई कैसी थी—समझना मुश्किल। फिर भी मन दूर-दूर तक निगाह दौड़ाई। पश्चिम की तरफ तो पड़ दिखाई पड़े। पेड़ों के बीच-बीच से दिखाई दिए खेत। आसमान। आसमान और आसमान। चारों तरफ फैला आसमान। साँझ को पूजा स्नान के लिए चमड़ाटोली की जमात उड़-

कर उधर से इधर को आती। शहर की तरफ न। माजदिया से भी दूर, बहुत दूर, कितने शहर, कितने फतेहपुर से गाँव पार करके तब कलकत्ता। वहाँ जोरों से चलती है घोड़ोंवाली ट्रामगाड़ी—सामने से गुजर जाती है तो छाती धड़कने लगती है। (क्यों धड़कने लगती है, पता नहीं) मिस्त्रियों के चालता गाछ से भी हजार गुने ऊँचे हैं वहाँ के मकान। उनके माथे पर लोग दीखते हैं पाँचवीं उँगली-से!

यही सब सोचते सोचते भूतनाथ पेड़ से उतर पड़ा।

और एक दिन का वाकया। भूतनाथ तब कुछ बड़ा हो चुका था। गंज अस्पताल के बड़े डॉक्टर का लड़का ननी स्कूल में दाखिल हुआ। खूबसूरत सा लड़का। जैसा ही गोरा रंग, वैसी ही काली काली आँखें बड़े-बड़े बाल। आगे चलकर कई बार भूतनाथ ने सोचा ननी गोरा लड़का नहीं। घनिष्ठता हो जाने के बाद भी ननी के हाथ से हाथ छू जाता कहीं, तो कैसा तो सिहर उठता भूतनाथ। स्कूल से मीलों चल कर घर आते वक्त तमाम रास्ता वह ननी की ही बात सोचता। कभी-कभी जी में आता ननी उसकी बहन हुआ होता तो अच्छा था। फिर तो दोनों जन साथ ही रहते, एक ही बिछावन पर सोते। कितनी बार छुट्टियों में भी भूतनाथ उतनी लम्बी राह पैदल चलकर स्कूल गया। जाकर छिपा छिपा अस्पताल के आस-पास मँडराता रहा। शायद एक निगाह ननी को देख पाए। शरम भी आती। कहीं ननी की नजर पड़ जाए उस पर! कहीं वह पूछ बैठे, क्यों भूतनाथ, यहाँ क्यों, तो क्या जवाब देगा वह?

आखिर ननी को तो यह कहा नहीं जा सकता था कि उसी को दर्शन के लिए आया है। अपनी एक किताब उसने ननी की किताबों में मिला दी थी चुपके से। कहीं इसी बहाने छुट्टी के बाद उससे दो बातें करने का मौका मिल जाए! और वह ननी उसके स्कूल में रहा भी कितने दिन! फिर भी कितनी ही बातें होतीं। उसके पिता की बदली कितनी ही जगह हुई। कितने स्कूलों में, कितने लड़कों के किस्से।

यही ननी एक दिन चला गया। चला गया उसके सदा-सदा के सपनों का शहर—कलकत्ता। उसके जाने के पहले दिन कैसा खराब हो गया

से देखा तो इत्ती-सी तो लग रही थी, पाँचवी उँगली जसी—

भूषण चाचा बोले—क्यो भई, सुना है, कलकत्ते म आजकल ब्याहता औरतें सिंदूर नही पहनती—घूघट उघारे खसम के साथ बग्गी पर हवा खोरी को निकलती हैं, ससुर-जेठ के सामने पति से बातें करती हैं ?

—झूठ, सरासर झूठ है चाचा—तारापद्दो सिर हिलाने लगा। ऐसा नही हो सकता मैं तो अपनी आँखो सब-कुछ देख आया। समझ लो कि सुबह गाडी से उतरा और फिर साँझ का आनेवाली गाडी पकडी—कलकत्ते का कुछ भी नही छोडा चाचा, सब देखा—रानाघाट से खरीदकर ले गया था डबलरोटी और माजरिया के रसगुल्ले—भर पेट खा लिया और एक एक कर सब कुछ देखा। घोडे की ट्राम देखी, वह जोर की चलती है कि पूछो मत चाचा ! सामने स गुजरती है तो छाती धडकने लगती है।

—क्यो, छाती क्या धडकने लगती है ?—भूतनाथ ने पूछा था।

जवाब लेकिन चाचा ने दिया था—तू चुप भी रह भुत्तू बेवकूफ जैसी बातें न कर लोग हसेंगे।

सच ही भूतनाथ फिर न बोला। सुनता रहा।

तारापद्दो ने कहा था, जी म आता है चाचा इस भुत्तू को एक बार वहाँ के रास्ते पर छोड दूँ —यकीन मानिए, यह जरूर फुक्का फाडकर रो पडेगा—

भूषण चाचा न भी तजुर्बेकार जसा कहा था—और क्या यह भी क्या श्रीनाथपुर के गाजन का मेला है कि रात भी हो गई तो परवाह नहीं चूडा मुरमुरा खाकर हलवाई की दुकान पर ही पड दिए।

तारापद्दो की जुबानी सुनकर कलकत्ते के नाम से छुटपन से ही रोमाच हो आता था भूतनाथ को। एक रोज वह मितिरो के चालता पड की फुनगी पर तक चढ गया था। उससे भी हजार गुना बडा। वह ऊँचाई क्या होगी—समझना मुश्किल। फिर भी उसने दूर-दूर तक निगाह दौडाई। पश्चिम की तरफ तो पेड दिखाई पडे। पडो के बीच-बीच से दिखाई दिए सन। आसमान। आसमान और आसमान। चारो तरफ फैला आसमान। साँझ को फल खाने के लिए चमगादडो की जमात उड

कर उधर से इधर को आती। शहर की तरफ से। माजदिया से भी दूर, बहुत दूर, कितने शहर, कितने फतेहपुर से गाँव पार करके तब कलकत्ता। वहाँ जोरों से चलती है घोड़ोंवाली ट्रामगाड़ी—सामने से गुजर जाती है तो छाती धड़कने लगती है। (क्यों धड़कने लगती है पता नहीं) मिस्त्रियों के चालता गाछ से भी हजार गुने ऊँचे हैं वहाँ के मकान। उनके माथे पर लोग दीखते हैं पाँचवी उंगली-से!

यही सब सोचते सोचते भूतनाथ पेड़ से उतर पड़ा।

और एक दिन का वाकया। भूतनाथ तब कुछ बड़ा हो चुका था। गंज अस्पताल के बड़े डॉक्टर का लड़का ननी स्कूल में दाखिल हुआ। खूबसूरत सा लड़का। जैसा ही गोरा रंग, वैसी ही काली काली आँखें, बड़-बड़े बाल। आगे चलकर कई बार भूतनाथ ने सोचा, ननी गोया लड़का नहीं। घनिष्ठता हो जाने के बाद भी ननी के हाथ से हाथ छू जाता कहीं तो कैसा तो सिहर उठता भूतनाथ। स्कूल से मीलों चल कर घर आते वक्त तमाम रास्ता वह ननी की ही बात सोचता। कभी-कभी जी में आता ननी उसकी बहन हुआ होता तो अच्छा था। फिर तो दोनों जने साथ ही रहते, एक ही बिछावन पर सोते। कितनी बार छुट्टियों में भी भूतनाथ उतनी लम्बी राह पैदल चलकर स्कूल गया। जाकर छिपा छिपा अस्पताल के आस पास मंडराता रहा। शायद एक निगाह ननी को देख पाए। शरम भी आती। कहीं ननी की नजर पड़ जाए उस पर! कहीं वह पूछ बैठे, क्या भूतनाथ, यहाँ क्यों, तो क्या जवाब देगा वह?

आखिर ननी को तो यह कहा नहीं जा सकता था कि उसी को देखने के लिए आया है। अपनी एक किताब उसने ननी की किताबों में मिला दी थी चुपके से। कहीं इसी बहाने छुट्टी के बाद उससे दो बातें करने का मौका मिल जाए! और वह ननी उसके स्कूल में रहा भी कितने दिन! फिर भी कितनी ही बातें होतीं। उसके पिता की बदली कितनी ही जगह हुई। कितने स्कूलों के, कितने लड़कों के किस्से।

वही ननी एक दिन चला गया। चला गया उसके सपने-मदा के सपनों का शहर—कलकत्ता। उसके जाने के पहले दिन कैसा खराब हो गया

था जो भूतनाथ का ! ननी को खुशी हुई थी कि उसके बिना कलकत्ते जाएँगे। लेकिन बड़ी हिम्मत बटोरकर भूतनाथ ने पूछा था—तुझे बड़ी तकलीफ हो रही है ननी क्यों ?

—क्या, तकलीफ क्यों न होगी ?

यह बात ननी के दिमाग ही में न आई कि कलकत्ता जाने में तकलीफ भी क्या हो सकती है ! लेकिन भूतनाथ के जी में आया था, उसे जैसी तकलीफ हो रही है वैसी ही तकलीफ ननी को भी होती, तो अच्छा था। ननी के जी में तकलीफ होना क्यों उचित है, शरम से इस बात को वह समझाकर न कह सका। उस रोज भूतनाथ की उस तकलीफ को ननी समझ नहीं सका। न समझ सकने की ही बात थी। उसने कितने तो शहर देखे। कितना बड़ा आदमी। भूतनाथ जैसे कितने लोग उसके जीवन में आएँगे जाएँगे सूर याद है, उसके जाने के बाद, खंडहर दह के पास पड़ के नीचे किस बेतरह रोया था भूतनाथ !

एक दिन ननी की चिट्ठी आई। चिट्ठी आई खास कलकत्ता से। जिन्दगी में चिट्ठी जैसे यही पहली बार मिली। उस चिट्ठी को पढ़कर उस दिन उसे जैसा आनन्द मिला वैसा आनन्द फिर किसी दिन किसी चिट्ठी को पढ़कर नहीं मिला। खत को जाने कितनी बार पढ़ा उसने। दिनों तक उसे तकिए के नीचे रखकर सोता रहा। कुरते के नीचे उसने उसे कलेजे के ऊपर रखा। गोया कागज के उस छोटे से टुकड़े में ननी के हाथ का स्पर्श हो। लेकिन लिखा ही ऐसा क्या था उसने ! यों कहिए तो कुछ भी नहीं लिखा था।

प्रिय भूतनाथ

पिछले सनीचर को हम लोग यहाँ पहुँच गए। कलकत्ता अच्छा खासा शहर इतना अच्छा शहर कि कह नहीं सकता। आने के बाद से पिताजी के साथ घूम ही रहा हूँ। बड़े बड़े मकान, चौड़े चौड़े रास्ते। बड़े मजे हैं। तुम लोगों की याद आती है। लिखना, तुम कैसे हो। ऊपर के पते पर पत्र देना।

उसका जवाब लिखने में भूतनाथ की दस कापियों का कागज बर्बाद हो गया। जवाब लेकिन तो भी लिखा न जा सका। पसन्द ही न आया।

लिखना और काट डालना। लाज लगती। उस दिन कलकत्ते से ननी का खत आना ही उसे जिन्दगी की सबसे बड़ी घटना मालूम हुई थी। उसका जवाब कलकत्ता भेजना है। यह बात उसके लिए अचरज की थी। यकीन नहीं आने लायक। अन्त में किसी तरह जवाब लिखकर भेजा था उसने। फिर जिन्दगी भर उसका जवाब नहीं आया। उसके जीवन से ननी तो सदा के लिए खो ही गया। मगर कलकत्ते के ख्याल को उसके मन से कभी कोई नहीं मेट सका।

इसके बाद एक घटना और घटी। भूतनाथ की उम्र बारह या तेरह की रही होगी और राधा की थी ग्यारह। राधा की शादी ठीक होने लगी। कलकत्ते से उसे देखने के लिए लोग आये। गजब का रोमांच। राधा का रोमांच हुआ या नहीं, भूतनाथ को मालूम न हो सका। अगर उसे हुआ भी हो तो भी भूतनाथ को उससे हजार गुना हुआ था। राधा! और राधा की ससुराल होगी कलकत्ते में! रश्क हुआ उसे। गुस्सा भी हुआ। कई दिन तक तो उसने राधा से भेंट ही न की बात तक न बोला।

एक दिन चूनेवाली चादर डाले, चमकते पम्प शू पहने कलकत्ता से कुछ लोग गाँव में आये। रात भर रहे। खूब खाया। नन्द काका ने सबको डाब का पानी पिलाया पोखर की मछली, गाय का घी, श्रीनाथपुर के किसुन हलवाई के यहाँ का रसगुल्ला और कनरसी चावल का भात खिलाया।

रिश्ता पक्का हो गया। एक दिन दुलहा बनकर पालकी पर आया ब्रजराखाल। वह राधा को ब्याहने के लिए कलकत्ते से आया। राधा को अपना दुलहा पसन्द आया या नहीं पता नहीं मगर भूतनाथ को पसन्द नहीं आया। मूँछ नहीं! यह कैसा दूल्हा! जितने भी दूल्हे गाँव में आये, सबके मूछ थी। राधा की सहेली हरिदासी के दूल्हे को मूछ थी। भूषण चाचा की बेटी शान्ता का दूल्हा आज भी आता है उसे भी मूछ है। भूतनाथ को उस उमर में ऐसा लगता था कि राधा के दूल्हे को मूछ होती तो खूब फबती! आज बराबर यह सोचकर भी हँसी आती है। दूल्हे को मूछ न होने का जो गम भूतनाथ को हुआ, वह इस बात पर जाता रहा

कि उसकी ससुराल कलकत्ते में हुई।

कोहबर में दूल्हे के साथ भूतनाथ काफी रात तक बैठा था। गोपा चाची ने उससे परिचय कराया था—इसे देख रहे हो न यह रिश्ते में तुम्हारा साला है बबा—

मल्लिक के घर की अंगना बाल उठी थी—बड़े हैं। तो फिर हम लोगों में क्यों दुबक बैठे हैं? भूतू भैया, बाहर जाओ न तुम।

सब के सब हँस पड़े थे।

शरम से भूतनाथ वहाँ और न बैठ सका। चुपके से उठकर चला आना पड़ा था उसे। ब्रजराखाल से बातें करने की उसे बड़ी ख्वाहिश थी। ख्वाहिश थी कि कलकत्ते के बारे में उससे पूछे पूछे कि वह अस्पताल के डाक्टर साहब के लड़के ननी को वह जानता है या नहीं—आदि इत्यादि। पर मन की मन ही रही।

यों है सुबह कुएँ के पास शरीफ के पेड़ की आड़ में खड़े होकर भूतनाथ ने सुना कि राधा माँ से कह रही है—माँ भूतू भैया मेरे साथ चलने को कह रहे थे।

—कहाँ?—माँ अवाक हो गई थी।

—मेरे साथ।

—तेरी ससुराल? क्या?

—सो नहीं जानती। कह रहे थे लेकिन।

—पागल।—कहकर वह हँस पड़ी थी। छि, क्या सोचा होगा उन्होंने! कौन जानता था कि राधा उनसे कह देगी! बड़ी बेवकूफ है।

बाद में भूतनाथ को पता चला राधा की ससुराल कलकत्ते में नहीं है। वहाँ से बहुत दूर कामारपुकुर में है। कामारपुकुर कहाँ है, कौन जाने! राधा वहीं रहती है। ब्रजराखाल कलकत्ते में नौकरी करता है। हर सनीचर को घर जाता है।

पहली बार जब राधा मैके लौटी तो पहचानना मुश्किल!

वह ठठाकर हँस पड़ी—भला भूतनाथ भैया किस कदर मेरी तरफ ताक रहे हैं देखो जरा—

मगर भूतनाथ कुछ और ही देख रहा था। भला इन के दिनों में यह